ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 131-135
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

मसि कागद छूऔं नहीं

आशीष कुमार साव
शोध अध्येता, हिन्दी विभाग विश्व–भारती, शांतिनिकेतन, 10/4/5 हाजीनगर बानक पाड़ा रोड़
डाक–हाजीनगर, थाना–नैहाटी, जिला उत्तर 24 परगना (पं0 बंगाल), भारत

Received- 17.04.2020, Revised- 22.04.2020, Accepted - 26.04.2020 E-mail: ashish-shaw09@gmail-com

सारांश : ***'मसि कागद छूऔं नहीं, कलम गहौं नहि हाथ***
चारों जुग कै महातम कबिरा मुखहिं जनाई बात'।

उपरोक्त पंक्ति को लेकर भ्रम की स्थिति पैदा हो गई है कि कबीर पढ़े–लिखे नहीं थे और मसि कागद से उनका दूर–दूर तक कोई सरोकार नहीं था । जो उचित नहीं है, उक्त दोनों पंक्ति को जोड़कर समझा जाए तो इसका सामान्य अर्थ यही प्रतीत होता है कि "न तो मैं स्याही और कलम छूता हूँ, न हाथ में कलम पकड़ता हूँ, चारों युगों के महात्म्य की बातें मैं मौखिक ही बतला देता हूँ" । कबीर जैसे असाधारण व्यक्ति का कोई पंक्ति साधारण नहीं होता । कबीर की दृष्टि में बड़ी–बड़ी पुस्तकों और पोथियों के अंबार से प्राप्त ज्ञान सामान्य होता है, उससे ईश्वर या शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति नहीं होती । महात्मा कबीर का मानना है कि प्रेम के प्रकाश में बिना इन पोथियों के चारों युगों का बखान किया जा सकता है ।इस परिप्रेक्ष्य में ओशो ने कहा है – 'प्रेम को ठीक से समझ लो ।उससे बड़ा कुछ भी नहीं है, परमात्मा भी नहीं य चूंकि प्रेम से परमात्मा मिलता है, परमात्मा के मौजूद होने से प्रेम तो नहीं मिलता । परमात्मा तो मौजूद है, प्रेम नहीं मिलता य लेकिन प्रेम मौजूद हो जाए तो परमात्मा मिल जाता है । जीसस ने कहा है : प्रेम ही परमात्मा है । ' इस परिप्रेक्ष्य में कबीर ने कहा भी है ।

कुंजीभूत शब्द– महातम, सरोकार, असाधारण, पोथियो, अंबार, महात्मा, परिपेक्ष्य, मौजूद, परमात्मा, सामान्य ।

'पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय ।
ढाई आखर प्रेम का, पढे सो पंडित होय ।'

कबीर का मानना था कि पोथियों को रटने से कोई फायदा नहीं है। बिना प्रेम का यह ज्ञान व्यक्ति विशेष के अंदर सिर्फ अहंकार ही लाता है द्य कबीर की दृष्टि में जिसने ढाई आखर के प्रेम को पढ़ कर उसे आत्मसात कर लिया, वास्तव में वही सच्चा पंडित होता है अर्थात पंडित बनाने के लिए मसि कागज से कोई लेना देना नहीं है। सबरी तो पंडित नहीं थी, मसि कागज से उसका भी कोई सरोकार नहीं था, फिर भी खुद भगवान उसके जूठे बैर खाने उसके द्वार तक चले आए थे। जबकि यह सुख कई विद्वानों, पंडितों, ऋषियों आदि के लिए दुर्लभ है। इसलिए निश्छल प्रेम की बाते पोथियों के दिए गए बातों से बहुत अधिक श्रेष्ठ है। इस कारण कबीर मसि और कागद की अपेक्षा प्रेम एवं अनुभव को ज्यादा महत्व देते थे। 'बड़ा सीधा–साफ रास्ता है कबीर का द्य बहुत कम लोगों का रास्ता इतना सीधा साफ है। टेढ़ी–मेंड़ी बात कबीर को पसंद नहीं द्य इसीलिए इसके रास्ते का नाम है : सहज योग। इतना सरल है कि भोलाभाला बच्चा भी चल जाए। वस्तुतः इतना सहज है कि भोलाभाला बच्चा भी चल सकता है पंडित नहीं चल पायेगा द्य तथाकथित ज्ञानी नहीं चल पायेगा। निर्दोष चित्त होगा, कोरा कागज होगा तो चल पायेगा।कबीर के संबंध में पहली बात समझ लेनी जरूरी है। वह पांडित्य का कोई अर्थ नहीं है द्य कबीर खुद भी पंडित नहीं हैं । कहा है कबीर ने : **'मसि कागद छूयों नहिं, कलम गहौं नहि हाथ द्य' कागज–कलम से उनकी कोई पहचान नहीं हैं । 'लिखालिखी की है नहीं, देखादेखी बात'– कहा है कबीर ने । देखा है, वही कहा है ।जो चखा है, वही कहा है। उधार नहीं है ।'** [2] कबीर पोथियों पर नहीं, आंखिन देखि पर विश्वास करते थे, शायद इसलिए कबीर का कोई विशेष मत नहीं था। **"कबीर जहां थे दृ काशी में, वहां पंडितों का जमाव था। चारों तरफ वे ही लोग थे, जो सोचते थे लिखलिखी की बात है, और वे जो वेद, उपनिषद, शास्त्रों के ज्ञाता थे, वे कबीर को अज्ञानी समझते थे । कबीर एक अर्थ में अज्ञानी हैं। अगर पंडित ज्ञानी है तो कबीर अज्ञानी हैं । लेकिन पंडित का ज्ञान क्या है ? दृ बातें करेगा आत्मा की, अमरता कीय मौत आएगा तो कँपेगा, रोयेगा, चीखेगा, चिल्लाएगा । सारी अमरता खो जाएगी मौत के मुकाबले दृ क्योंकि अमरता तो जानी नहीं य पढ़ी थी देखी नहीं थीय सुनी थीय किसी और ने कहीं थीय किसी और का अनुभव रहा होगा, अपना अनुभव न था।** [3] कबीर प्रत्येक धर्म एवं मतों के अच्छाइयों को ग्रहण करने के साथ–साथ उसकी कुरीतियों का विरोध करते थे। कबीर का मसि और कागद से भी कोई लेना–देना नहीं था। कारण यह था कि उस समय मसि कागद से लिखे पोथियों को ही आधार बनाकर समाज में शोषण का चक्र चलता था। कबीर उन पोथियों के कथनानुसार किए जाने वाले आडंबरों एवं रूढ़ियों

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

पर प्रश्न चिह्न लगाते थे। और व्यावहारिक धरातल पर अपने तर्क से इनका खंडन करते थे । कबीर कोई धार्मिक गुरु, साहित्यकार, दार्शनिक, संत या कवि आदि–आदि नहीं थे । कबीर की मूल चिंता समाज की विसमता, समाज में निहित आडंबर, समाज से खत्म होते प्रेम की थी । कबीर शोषक और शोषित के भेद को मिटाकर मानवीयता को स्थापित करना चाहते थे । उस समय समाज की सबसे बड़ी विडम्बना यह थी कि एक तरफ जहां बहुतायत संख्या में लोग मसि कागद से बहुत दूर थे और दूसरी तरफ एक विशेष समुदाय के लोग मसि कागद से लिपटे हुए था। इन दोनों के बीच समानता का कोई प्रश्न ही नहीं था । समाज में चारों तरफ निराशा ही निराशा व्याप्त थी। कबीर ने इस निराशा को पाटने का कार्य किया और पोथियों के स्थान पर प्रेम को महत्व दिया । शायद यही कारण होगा कि कबीर ने कोई पुस्तक व ग्रंथ नहीं लिखा । कबीर साहित्य से संबंधित ग्रंथ बीजक आदि कबीर द्वारा नहीं बल्कि उनके शिष्यों द्वारा लिखी गई । कबीर जैसा व्यक्तित्व दुर्लभ है द्य **"जो लोग कबीरदास को हिन्दू–मुस्लिम धर्मों का सर्व–धर्म–समन्वयकारी सुधारक मानते हैं वे क्या चाहते हैं, ठीक से समझ नहीं आता । कबीर का रास्ता बहुत साफ था । वे दोनों को शिरसा स्वीकार कर समन्वय करनेवाले नहीं थे । समस्त ब्राह्याचारों के जंजालों और संस्कारों को विध्वंश करने वाले क्रांतिकारी थे । समझौता उनका रास्ता नहीं था ।इतने बड़े जंजाल को नहीं कर सकने की क्षमता मामूली आदमी में नहीं हो सकती । कमजोर स्नायु का आदमी इतना भार बर्दास्त नहीं कर सकता । जिसे अपने मिशन पर अखंड विश्वास नहीं है वह इतना असम साहसी हो ही नहीं सकता ।"**[4]

ऐसा पहली बार नहीं हुआ कि पोथी विद्या की खिल्ली सिर्फ कबीर ने ही उड़ाई, इससे पहले भी पोथी विद्या की खिल्ली उड़ाई गई है । वास्तव में प्रत्येक विद्या का एक समय होता है एक काल खंड होता है, जिसके पश्चात उसमें रूढ़िवादिता और आडंबर स्थान ग्रहण कर लेती है। इसलिए समयानुसार उसमें परिवर्तन आना नितांत आवश्यक हो जाता है । 'गोरक्ष सिद्धांत दृसंग्रह' में पुस्तकी विधा की बड़ी खिल्ली उड़ाई है । इसमें कवेशय गीता की एक कहानी उद्धृत की गई है । दुर्वासा मुनि सब शस्त्र पढ़कर महादेव की सभा में गए । वहाँ पर उनके अध्यात्म ज्ञान के अभाव को देखकर नारद ने उन्हें **'भारवाही गर्दभ' कहा । अमर्षि दुर्वासा ने सारी पुस्तकें समुन्द्र में भेंक दीं और शिव से आध्यात्म विधा की भिक्षा मांगीं द्य कबीर ने भी पोढ़ी पढ़ पढ़कर मरने वाले और फिर भी राम को न जान सकने वाले ज्ञान मूढ़ों की कुछ ऐसी ही खिल्ली उड़ाई है । कबीर का स्वर बिलकुल इस योगियों से मिलता जुलता है । योगियों के पूर्ववर्ती सहजयानी साध ाकों में भी यह बात पायी जाती है .... कबीर ने कहा था कि पोथी पढ़–पढ़कर सारा संसार मर गया मगर पंडित कोई नहीं हुआ, केवल प्रियतम को मिलने वाला, केवल एक ही अक्षर पढ़ने वाला पंडित हो जाता है य तो वे गोरखपंथी योगमार्गियों के ही स्वर में बोल रहे थे घर घर में पुस्तक के बोझ धोने वाला विद्यमान है, नगर में पंडितों की मंडली मौजूद है, वन वन में तपस्वियों के झुंड वर्तमान है, किन्तु ब्रह्म को जानने वाला और उसे पाने का उद्योग करने वाला कोई नहीं ।"**[5] इस विषय कों केंद्र में रखकर सोचने से यह स्पष्ट होता है कि कबीर ने आखिर क्यों 'मसि कागद छूऔं नहीं, कलम गहौं नहि हाथ' की बात कही थी द्य वास्तव में यह समय की मांग थी, समाज में विलुप्त हुए प्रेम को जगाने का समय था ।

कबीर की शिक्षा–दीक्षा व्यावहारिक धरातल पर हुई थी । कबीर सब धर्म के धार्मिक प्रवचनों और मठों के सत्संग में बैठ कर आत्म चिंतन करके ही प्रश्न उठाते थे । कबीर विभिन्न मतों के आपसी मतभेदों को मिटा कर प्रेम को स्थापित करना चाहते थे। **"योग कहता है, सांख्य कहता है, इंद्रियाँ दो तरह की हैं । एक, स्थूल इंद्रियाँ हैं जो बाहर की तरफ जाती है य दूसरी सूक्ष्म इंद्रियाँ हैं जो भीतर की तरफ जाती हैं । और भीतर कोई शस्त्र नहीं है जिसे तुम पढ़ लो । बाहर तो वेद हैं , कुरान हैं, बाइबिल हैंय भीतर तो कोई शस्त्र नहीं है य भीतर तो सिर्फ आत्मा है य भीतर तो सिर्फ तुम हो वही शस्त्र है । जब भीतर की आँख उस भीतर के शस्त्र को देख लेती है, उसे कबीर कहते हैं : 'देखादेखी बात' जब तुम अपने आमने–सामने खड़े हो जाते हो, जब तुम्हारी अपने से पहचान हो जाती है जब तुम अपने को ऐसे देख लेते हो कि देखने को कुछ और शेष न रह जाये ।"**[6] कबीर के अनुसार शुद्ध शिक्षा वही है जो मनुष्य में मनुष्यता एवं मानवीयता का विकास करती है, उसे सच्चा और नेक इंसान बनती है । **" कबीर की शिक्षा दृदीक्षा के संबंध में भी विवाद है । कबीर ने 'मसि कागद छुयो नहीं' तथा 'विद्या न परउ' कहा है, इसे उन्हें शिक्षा दीक्षा के कोरा कहा जाने लगा । पुस्तक पढ़ना और कागज मे लिखना तथा डिग्री और उपाधियाँ पाना दृभर शिक्षा नहीं कहा जा सकती । शुद्ध शिक्षा तो वहीं है जो मनुष्य का विभिन्न प्रकार से विकास करती है और मानव को सच्चा मानव बनाती है ।"**[7] ऐसा भाव एक आदर्श समाज के लिए अतिआवश्यक है । वर्तमान समय में मनुष्य में मनुष्यता लुप्त होती जा रही है । मानवीय संवेदना, करुणा, दया आदि

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

एक स्वास्थ्य समाज के लिए अति आवश्यक है। कबीर की मुख्य चिंता यही थी । कबीर पोथियों के स्थान पर मानवीयता को महत्व देते थे और जो इसके मध्य आता, उसकी वे आलोचना करते थे । कबीर के विचार उस समय के साथ–साथ आज के लिए भी नितांत आवश्यक है । यही कारण है कि कबीर ने मसि कागद को प्रेम के समक्ष तुक्ष्य बताया था।

हिंदी साहित्य के विद्वानों ने जिन पोथियों का हवाला देकर कबीर को बिना पढ़ा लिखा संत,अनपढ़ आदि कहने की एक परंपरा बनाई है । उन पोथियों के आधार पर ही निम्न वर्ग के लोगों का शोषण किया जाता था । उनके सभी अधिकार छीने गए, उनका शोषण किया गया । कबीर इस शोषण के चक्र से परिचित थे । **"साधारण जनता भूखे मरती थी द्य उसको कोई पूछता नहीं था । शूद्र के नाम पर मानव को विद्या, बुद्धि से दूर रखा जाता था । पुरोहित वर्ग माले माल हो रहा था। वह देश के शासन पर आधिपत्य जमा लिया था । सारे विधान अपने लिए पुरोहित वर्ग बना दिया था । शूद्र कहे जाने वाली जनता की बात सुनी नहीं जाती थी । उलटे उसके लिए कठोर दंड संहिता बनायी है थी । शूद्र के लिए बोलने का कोई अधिकार नहीं थे । वह किसी अपना दुःख राजा को एवं पुरोहित को नहीं सुना सकता था । वह विद्यालय में पढ़ नहीं सकता था । वह वेद पढ़ने का अधिकारी नहीं था । उसके लिए मंदिर के दरवाजे नहीं खुले थे । वह कही वेद सुन लेता तो उसकी जिह्वा काट ली जाती द्यकान में शीशा पीला दिये जाते थे । मृत्यु दंड अकारण में ही दिया जाता था । उसके मार्ग अलग होते थे । जिस मार्ग से पुरोहित जाता था । ब्रहमण जाता था, उस मार्ग से शूद्र नहीं जा सकता था । जिस कूप दृतड़ाग में ब्रहमण पानी पिता था और नहाता था । वह शूद्र के लिए और अन्त्यज के लिए प्रतिबंधित होता था ।"**[8] यह कैसा समाज था, कैसी परिस्थिति थी, जहां समाज में कुलीनों एवं पुरोहितों का ही बोलबाला था । जहां गरीब शूद्र शोषित होता था। उनको उनके अधिकार से वंचित किया जाता था । कबीर के समय में समाज की स्थिति दयनीय थी । यह कैसी बिडम्बना है कि जहां एक तरफ एक बच्चे को अपने समय के धार्मिक आडंबर पाखंडों से शोषित किया जाता था। उन्हें शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा जाता था । उसी समाज से निकले महात्मा कबीर जब अपने प्रयास व सत्संग से अपने विचारों को एक आयाम दिए, तो धर्म के ठेकेदार उसे अज्ञानी–अनपढ़ बताकर उसके विचारों को हास्यास्पद एवं मनोरंजन पूर्ण कहानियों तक ही सीमित कर दिया । **"सबसे मजेदार बात यह है कि अयोध्या सिंह उपाध्याय ने इस पुस्तक का दूसरा शीर्षक ' कबीर साहब के उत्तमोत्तम भजनों और साखियों का संग्रह' रख कर खुद को इसका संग्रह कर्ता कहा है । नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने भी इस पुस्तक को अपनी 'मनोरंजन पुस्तक माला' सीरीज के अंतर्गत छापा था । उस सीरीज की यह 12 वीं पुस्तक थी । इससे यह जाहिर होता है कि अँग्रेजी विद्वानों ने कबीर के अध्ययन की जो धार्मिक और गंभीर खोज करनी चाही थी, काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने उसे केवल मनोरंजन की चीज मानकर उड़ा देना चाहती थी ।"**[9] यह कैसी विडम्बना है कि हिंदी साहित्य के इतिहास में भक्ति काल का एक मुख्य स्तम्भध्धारा का नेतृत्व करने वाला, अपनी विचारों द्वारा जनमानस को एक नई ऊर्जा देने वाला, विसमता एवं आराजकता पूर्ण समाज में मानवीयता एवं मनुष्यता का संदेश देने वाला, वर्तमान समय में जन–जन के बीच आज भी जीवित रहने वाला स्थित प्रज्ञ कबीर के विचारों, उनके संदेशों, उनके वाणियों में नागरी प्रचारिणी सभा ने सिर्फ मनोरंजन देखा । इस विषय पर विद्वानों एवं आलोचकों ने प्रतिक्रिया क्यों नहीं दी ? अधोहस्ताक्षरी द्वारा कबीर चौरामठ के मुलगादी के संत आदरणीय विवेकदास आचार्य से इस विषय पर करीब 2 घंटे का गहन साक्षात्कार लिया गया । जिसमें उन्होने ने यह स्पष्ट किया कि कबीर के साथ हिंदी के साहित्यकारों ने न्याय नहीं किया । उन्होने कहा कि सभी कबीर के कातिल है और उनके गूढ़ दार्शनिक दोहों का गलत अर्थ लगाकर उन्हें बिना पढ़ा–लिखा, अनपढ़ आदि कहने की परंपरा चला दी । कबीर काशी के ज्ञानी, विद्वानों की सभामंडल में सारे आम प्रश्न उठाते थे, जिसका जवाब धर्म के ठेकेदारों व पढे–लिखे विद्वानों के पास नहीं होता था । इस स्थिति में बिना पढ़ा–लिखा, अनपढ़ किसे कहा जाए ? इस विषय पर भी सोचने की आवश्यकता है । इस विषय पर डॉ धर्मवीर भारती ने भी अपना विरोध दर्ज किए है और इसका जवाब उन्होने अपनी पुस्तक 'कबीर के आलोचक' पुस्तक में दियाय किन्तु वे भी दलित के चसमे से कबीर को देखने का प्रयास किए है, जो न्याय संगत नहीं है, इसका कारण यह है कि कबीर का विचार किसी जाति विशेष के लिए नहीं बल्कि पूरे मानव समुदाय के लिए था ।

कबीर के समय में जहां तक जुलाहा जाति व निम्न वर्गों की शिक्षा–दीक्षा का प्रश्न है । वहाँ यह जानना अतिवाश्यक है कि **"इस योगी जाति के लिए कोई अलग या स्वतंत्र पाठशाला न थी । मुसलमानों के मदरसे में उन्हें प्रवेश नहीं मिला, क्योंकि वे शुद्ध मुसलमान न थे । और हिंदुओं के भी पाठशाला में शुद्ध हिंदू न होने के**

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

अपराध में प्रवेश का अधिकार न माने गए। परिणाम यह हुआ कि कबीर को लिखने–पढ़ने का सौभाग्य कभी न मिला द्य यह था वर्णसंस्कार और वर्णाश्रम भ्रष्ट जातियों को दुर्भाग्यवश अपने समय से मिला अभिशाप ।[10] वास्तव में "मसि कागद छूऔं नहीं, कलम गहौं नहि हाथ " कबीर के उस दुख की तरफ इंगित कर रही है, जहां समाज के प्रबुद्ध लोग पोथियों को आधार बनाकर उन्हें उनके जात का हवाला देकर उनसे उनका लिखने–पढ़ने का सौभाग्य छिन लिया द्य निम्न वर्ग के पिछड़े जाति व समुदाय के लोगों को इस अधिकार से वंचित रखा गया । यह कैसी शिक्षा पद्धति है, जहां ज्ञान से नहीं जात देखकर शिक्षा दी जाती थी द्य इस विषय पर भी सोचने कि अवश्यकता है । कबीर की शिक्षा अनुभूति मय थी ।

कबीर के पूर्व और बाद भी यह शोषण का चक्र चलता आ रहा था । धर्म के नाम पर, पोथियों को आधार बनाकर ऐसा धार्मिक कुचक्र चलता आ रहा था, इसमें कोई दो राए नहीं है । कबीर इस समाज में रहकर इसके दंश को भुगतने के साथ–साथ इसके विरुद्ध आवाज उठा चुके थे । **"समाज में इनका स्थान क्या है, यह इस बात से अनुमान किया जा सकता है कि 1921 ई० की मनुष्य गणना के समय जब एक जुगी परिवार ने अपने को स्थानीय प्रचालन के अनुसार 'जुगी' न लिखकर 'योगी' लिखना चाहा तथा अपने स्त्री के नाम के सामने 'देवी' जुड़वाने की इच्छा प्रकट की, तो गणना दृलेखक ब्रहमण कर्मचारी ने कहा था कि मैं अपना हाथ काटा देना अच्छा समझूँगा, पर 'जुगी' को 'योगी' और इनकी स्त्रियों को 'देवी' नहीं लिख सकूँगा ।"** [11] वास्तविकता यह है कि हमें उस समय के सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थितियों को केंद्र में रखकर कबीर की शिक्षा–दीक्षा पर सोचना चाहिए । उस समय शिक्षा की स्थिति क्या थी । कबीर चूंकि न शुद्ध मुसलमान थे और ना ही शुद्ध हिन्दू । इस स्थिति में वे ना मदरसा में जा सकते थे और ना ही गुरुकुलों में ही जा सकते थे । वे कहाँ और किस प्रकार अपनी शिक्षा पूरी करते, इस विषय पर भी चिंतन करने की आवश्यकता है । **"कबीरदास ने जुलाहों की जाति को कमीनी जाति कहा है (कबीर ग्रंथावली, पृष्ठा 270) और यह भी बताया है कि उन दिनों भी यह जाति जन– साधारण में उपहास और मजाक की पात्र थी द्य साधारणतः मूर्खता संबंधी कहानियों का एक बहुत बड़ा अंश सारे भारतवर्ष में जुलाहों से भी बना है । अब प्रश्न यह है कि इतना बड़ा जनसमूह एक ही साथ मुसलमान क्यों हो गया ? सामाजिक मर्यादा की उन्नतिवाली बात तो कबीर की अपनी गवाही से ही परास्त हो जाति है ।"** [12] इसलिए **"कबीर को पढ़ने कलिए उन्हें अजूबा बनाने के प्रलोभनों से मुक्त होनो पहले जरूरी है ।"** [13] कबीर शोषण के चक्र को तोड़ने का प्रयास करते थे, उससे लड़ते थे, यही कारण है कि कबीर का प्रत्येक दोहा आज भी रूढ़िवादी समाज के समक्ष एक प्रश्न पूछता नजर आता है । **"कबीर को, और उनके समय को समझने के लिए, इन सवालों का तथ्यसम्मत और तर्कसंगत विचार करना जरूरी है । कबीर की खोज या उनपर शोध करने से पहले कबीर की लोक स्मृति के साथ संवाद जरूरी है । कबीर के ही नहीं , सभी समाजों के स्मृति कोषों और औपनिवेशिक ज्ञानकांड द्वारा उनके उपयोग दुरुपयोग को समझना जरूरी है, ताकि हम इस ज्ञानकांड (एपीस्टीम) द्वारा इसके समाज की स्थित देख और समझ सकें ।"**[14] कबीर की भाषा कबीर के दोहें सामान्य नहीं है द्य वास्तव में **"कबीर दास का लालन–पालन जुलाहा परिवार में हुआ था, इसलिए उनके मत का महत्वपूर्ण अंश यदि इस जाति के परंपरागत विश्वासों से प्रभावित रहा हो, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है ।"**[15] अधिकांश विद्वानों ने कबीर को जुलाहा ही माना और उस समय के निम्न वर्गों व जुलाहों की स्थिति बहुत दयनीय थी द्य **"जुलाहा जाति को अभी भी समाज में कोई स्थान नहीं मिला था । समाज में इनकी स्थिति काफी दयनीय थी । समाज में ये उपहास की पात्र बन गई थी ।"** [16]

जिस कबीर के समक्ष भाषा खुद लाचार सी थी, उसे सिर्फ एक दोहे को केंद्र में रख कर अनपढ़ बोलना बहुत ही दुखद बात है द्य कबीर के विचार सीधे है, वे जिस विषय पर भी अपना विचार रखते थे, उसमें किसी भी प्रकार का कोई संदेह नहीं छोड़ते थे ।**"कबीर के कहने का अंदाजे बयां, कहने का ढंग, कहने कि मस्ती बड़ी बेजोड़ है । ऐसा अभय और ऐसा साहस और ऐसा बगावती स्वर, किसी और का नहीं है ।"**[17] कबीर अनुगामी नहीं थे, उस समय कि साहित्यिक भाषा के स्थान पर जन भाषा को कबीर ने महत्व दिया और जिस बात को जैसे कहना चाहा वैसे उसे कह दिया और जनमानस भी उसे उसी रूप में उसे समझ लेती थी द्य कबीर के विचारों के साथ–साथ कबीर की भाषा भी प्रखर थी । **"भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था द्य वे वाणी के डिक्टेटर थे । जिस बात को वे जिस रूप में प्रकट करना चाहा है उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया बन गया तो सीधे–सीधे, नहीं तो दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार सी नजर आती है।"** [18] इस प्रकार कबीर जैसे महात्मा पुरुष को सिर्फ एक दोहे के आधार पर उनकी

PIF/5.002 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

शिक्षा–दीक्षा का आकलन करना और अनपढ़ प्रमाणित करना दुखद है ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ओशो (2008), कहै कबीर मैं पूरा पाया, थोमसोन प्रेस(भारत), नई दिल्ली, भूमिका–पृष्ठ–4।
2. ओशो (2008), कहै कबीर मैं पूरा पाया, थोमसोन प्रेस(भारत), नई दिल्ली, भूमिका–पृष्ठ–VI&VII .
3. ओशो (2008), कहै कबीर मैं पूरा पाया, थोमसोन प्रेस(भारत), नई दिल्ली, पृष्ठ–27।
4. द्विवेदी हजारी प्रसाद (2006), कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ–147।
5. द्विवेदी हजारी प्रसाद (2006), कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ–39।
6. ओशो (2008), कहै कबीर मैं पूरा पाया, थोमसोन प्रेस(भारत), नई दिल्ली, पृष्ठ–35।
7. सहाय रामजी लाल (1961), कबीर दर्शन, पृष्ठ दृ 33 ।
8. शास्त्री आचार्य गंगाशरण (1989), बीजक टीका मनोरमा, कबीर वाणी प्रकाशन केंद्र,वाराणसी, पृष्ठ–38 ।
9. डॉ० धर्मवीर, कबीर के आलोचक, वाणी प्रकाशन दृदरियागंज नई दिल्ली 110002, आवृति संस्करण 2015, पृष्ठ–25।
10. सूरती उर्वशी (2008), कबीर : जीवन और दर्शन, लोकभारती प्रकाशन, पृष्ठ–42।
11. द्विवेदी हजारी प्रसाद (2006), कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –20।
12. द्विवेदी हजारी प्रसाद (2006), कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –19।
13. अग्रवाल पुरुषोत्तम, अकथ–कहानी प्रेम की, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृष्ठ–7।
14. अग्रवाल पुरुषोत्तम, अकथ–कहानी प्रेम की, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृष्ठ–19।
15. द्विवेदी हजारी प्रसाद (2006), कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –15।
16. द्विवेदी हजारी प्रसाद (2006), कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –15।
17. ओशो (2008), कहै कबीर मैं पूरा पाया, थोमसोन प्रेस(भारत), नई दिल्ली, भूमिका–पृष्ठ–VII.
18. द्विवेदी हजारी प्रसाद (2006), कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ –170 ।

*****